निवास करते हैं। तदनन्तर नाना तीर्थोंमें भ्रमण करता हुआ सारथि पापनाशिनी मथुरापुरीमें गया; यह भगवान् श्रीकृष्णका आदि स्थान है, जो परम महान् एवं मोक्ष प्रदान करनेवाला है। वेद और शास्त्रोंमें वह तीर्थ त्रिभुवनपति भगवान् गोविन्दके अवतारस्थानके नामसे प्रसिद्ध है। नाना देवता और ब्रह्मर्षि उसका सेवन करते हैं। मथुरा नगर कालिन्दी (यमुना) के किनारे शोभा पाता है। उसकी आकृति अर्द्धचन्द्रके समान प्रतीत होती है। यह सब तीर्थोंके निवाससे परिपूर्ण है। परम आनन्द प्रदान करनेके कारण सुन्दर प्रतीत होता है। गोवर्धन पर्वतके होनेसे मथुरामण्डलकी शोभा और भी बढ़ गयी है। वह पवित्र वृक्षों और लताओंसे आवृत है। उसमें बारह वन हैं। वह परम पुण्यमय तथा सबको विश्राम देनेवाले श्रुतियोंके सारभूत भगवान् श्रीकृष्णकी आधार-भूमि है।

तत्पश्चात् मथुरासे पश्चिम और उत्तर दिशाकी ओर बहुत दूरतक जानेपर सारथिको काश्मीर नामक नगर दिखायी दिया, जहाँ शङ्खके समान उज्ज्वल गगनचुम्बी महलोंकी पङ्क्तियाँ भगवान् शङ्करके अट्टहासकी भाँति शोभा पाती हैं। जहाँ ब्राह्मणोंके शास्त्रीय आलाप सुनकर मूक मनुष्य भी सुन्दर वाणी और पदोंका उच्चारण करते हुए देवताके समान हो जाते हैं। जहाँ निरन्तर होनेवाले यज्ञ-धूमसे व्याप्त होनेके कारण आकाश-मण्डल मेघोंसे धुलते रहनेपर भी अपनी कालिमा नहीं छोड़ता। जहाँ उपाध्यायके पास आकर छात्र जन्मकालीन अभ्याससे ही सम्पूर्ण कलाएँ स्वतः पढ़ लेते हैं तथा जहाँ माणिक्येश्वर नामसे प्रसिद्ध भगवान् चन्द्रशेखर देहधारियोंको वरदान देनेके लिये नित्य निवास करते हैं। काश्मीरके राजा माणिक्येशने दिग्विजयमें समस्त राजाओंको जीतकर भगवान् शिवका पूजन किया था, तभीसे उनका नाम माणिक्येश्वर हो गया था। उन्हींके मन्दिरके दरवाजेपर महात्मा रैक्व एक छोटी-सी गाड़ीपर बैठे अपने अङ्गोंको खुजलाते हुए वृक्षकी छायाका सेवन कर रहे थे। इसी अवस्थामें सारथिने उन्हें देखा। राजाके बताये हुए भिन्न-भिन्न चिह्नोंसे उसने शीघ्र ही रैक्वको पहचान लिया और उनके चरणोंमें प्रणाम करके कहा—'ब्रह्मन्! आप किस स्थानपर रहते हैं? आपका पूरा नाम क्या है? आप तो सदा स्वच्छन्द विचरनेवाले हैं, फिर यहाँ किसलिये ठहरे हैं? इस समय आपका क्या करनेका विचार है?'

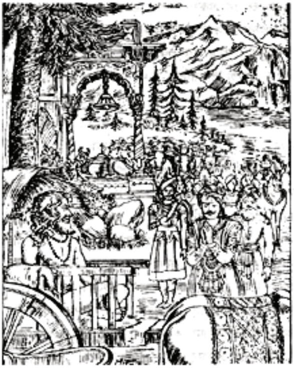

सारथिके ये वचन सुनकर परम आनन्दमें निमग्न महात्मा रैक्वने कुछ सोचकर उससे कहा—'यद्यपि हम पूर्णकाम हैं—हमें किसी वस्तुकी आवश्यकता नहीं है, तथापि कोई भी हमारी मनोवृत्तिके अनुसार परिचर्या कर सकता है।' रैक्वके हार्दिक अभिप्रायको आदरपूर्वक ग्रहण करके सारथि धीरेसे राजाके पास चल दिया। वहाँ पहुँचकर राजाको प्रणाम करके उसने हाथ जोड़ सारा समाचार निवेदन किया। उस समय स्वामीके दर्शनसे उसके मनमें बड़ी प्रसन्नता थी। सारथिके वचन सुनकर राजाके नेत्र आश्चर्यसे चकित हो उठे। उनके हृदयमें रैक्वका सत्कार करनेकी श्रद्धा जाग्रत् हुई। उन्होंने दो खच्चरियोंसे जुती हुई एक गाड़ी लेकर यात्रा की। साथ ही मोतीके हार, अच्छे-अच्छे वस्त्र और एक सहस्र गौएँ भी ले लीं। काश्मीरमण्डलमें महात्मा रैक्व जहाँ रहते थे, उस स्थानपर पहुँचकर राजाने सारी वस्तुएँ उनके आगे निवेदन कर दीं और पृथ्वीपर पड़कर साष्टाङ्ग प्रणाम किया। महात्मा रैक्व अत्यन्त भक्तिके साथ चरणोंमें पड़े हुए राजा जानश्रुतिपर कुपित हो उठे और बोले—'रे शूद्र! तू दुष्ट राजा है। क्या तू मेरा वृत्तान्त नहीं जानता?

रैक्वने कहा—राजन्! मैं प्रतिदिन गीताके छठे अध्यायका जप करता हूँ; इसीसे मेरी तेजोराशि देवताओंके लिये भी दुःसह है।

तदनन्तर परम बुद्धिमान् राजा जानश्रुतिने यत्नपूर्वक महात्मा रैक्वसे गीताके छठे अध्यायका अभ्यास किया।

यह खचरियोंसे जुती हुई अपनी ऊँची गाड़ी ले जा। ये वस्त्र, ये मोतियोंके हार और ये दूध देनेवाली गौएँ भी स्वयं ही ले जा।' इस तरह आज्ञा देकर रैक्वने राजाके मनमें भय उत्पन्न कर दिया। तब राजाने शापके भयसे महात्मा रैक्वके दोनों चरण पकड़ लिये और भक्तिपूर्वक कहा—'ब्रह्मन्! मुझपर प्रसन्न होइये। भगवन्! आपमें यह अद्भुत माहात्म्य कैसे आया? प्रसन्न होकर मुझे ठीक-ठीक बताइये।'

इससे उन्हें मोक्षकी प्राप्ति हुई। इधर रैक्व भी भगवान् माणिक्येश्वरके समीप मोक्षदायक गीताके छठे अध्यायका जप करते हुए सुखसे रहने लगे। हंसका रूप धारण करके वरदान देनेके लिये आये हुए देवता भी विस्मित होकर स्वेच्छानुसार चले गये। जो मनुष्य सदा इस एक ही अध्यायका जप करता है, वह भी भगवान् विष्णुके ही स्वरूपको प्राप्त होता है—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

श्रीमद्भगवद्गीताके सातवें तथा आठवें अध्यायोंका माहात्म्य

भगवान् शिव कहते हैं—पार्वती! अब मैं सातवें अध्यायका माहात्म्य बतलाता हूँ, जिसे सुनकर कानोंमें अमृत-राशि भर जाती है। पाटलिपुत्र नामक एक दुर्गम नगर है, जिसका गोपुर (द्वार) बहुत ही ऊँचा है। उस नगरमें शङ्कुकर्ण नामक एक ब्राह्मण रहता था; उसने वैश्य-वृत्तिका आश्रय लेकर बहुत धन कमाया, किन्तु न तो कभी पितरोंका तर्पण किया और न देवताओंका पूजन ही। वह धनोपार्जनमें तत्पर होकर राजाओंको ही भोज दिया करता था। एक समयकी बात है, उस ब्राह्मणने अपना चौथा विवाह करनेके लिये पुत्रों और बन्धुओंके साथ यात्रा की। मार्गमें आधी रातके समय जब वह सो रहा था, एक सर्पने कहींसे आकर उसकी बाँहमें काट लिया। उसके काटते ही ऐसी अवस्था हो गयी कि मणि, मन्त्र और ओषधि आदिसे भी उसके शरीरकी रक्षा असाध्य जान पड़ी। तत्पश्चात् कुछ ही क्षणोंमें उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। फिर बहुत समयके बाद वह प्रेत सर्पयोनिमें उत्पन्न हुआ। उसका चित्त धनकी वासनामें बँधा था। उसने पूर्व वृत्तान्तको स्मरण करके सोचा—'मैंने जो घरके बाहर करोड़ोंकी संख्यामें अपना धन गाड़ रखा है, उससे इन पुत्रोंको वञ्चित करके स्वयं ही उसकी रक्षा करूँगा।' एक दिन साँपकी योनिसे पीड़ित होकर पिताने स्वप्नमें अपने पुत्रोंके समक्ष आकर अपना मनोभाव बताया, तब उसके निरङ्कुश पुत्रोंने सबेरे उठकर बड़े विस्मयके साथ एक-दूसरेसे स्वप्नकी बातें कहीं। उनमेंसे मझला पुत्र कुदाल हाथमें लिये घरसे निकला और जहाँ उसके पिता सर्पयोनि धारण करके रहते थे, उस स्थानपर गया। यद्यपि उसे धनके स्थानका ठीक-ठीक पता नहीं था तो भी उसने चिह्नोंसे उसका ठीक निश्चय कर लिया और लोभबुद्धिसे वहाँ पहुँचकर बाँबीको खोदना आरम्भ किया। तब उस बाँबीसे बड़ा भयानक साँप प्रकट हुआ और बोला—ओ मूढ़! तू कौन है, किसलिये आया है, क्यों बिल खोद रहा है, अथवा किसने तुझे भेजा है? ये सारी बातें मेरे सामने बता।'

पुत्र बोला—मैं आपका पुत्र हूँ। मेरा नाम शिव है। मैं रात्रिमें देखे हुए स्वप्नसे विस्मित होकर यहाँका सुवर्ण लेनेके कौतूहलसे आया हूँ।

पुत्रकी यह लोकनिन्दित वाणी सुनकर वह साँप हँसता हुआ उच्चस्वरसे इस प्रकार स्पष्ट वचन बोला—'यदि तू मेरा पुत्र है तो मुझे शीघ्र ही बन्धनसे मुक्त कर। मैं पूर्वजन्मके गाड़े हुए धनके ही लिये सर्पयोनिमें उत्पन्न हुआ हूँ।'

पुत्रने पूछा—पिताजी! आपकी मुक्ति कैसे होगी? इसका उपाय मुझे बताइये; क्योंकि मैं इस रातमें सब लोगोंको छोड़कर आपके पास आया हूँ।

पिताने कहा—बेटा! गीताके अमृतमय सप्तम अध्यायको छोड़कर मुझे मुक्त करनेमें तीर्थ, दान, तप और यज्ञ भी सर्वथा समर्थ नहीं हैं। केवल गीताका सातवाँ अध्याय ही प्राणियोंके जरा-मृत्यु आदि दुःखको दूर करनेवाला है। पुत्र! मेरे श्राद्धके दिन सप्तम अध्यायका पाठ करनेवाले ब्राह्मणको श्रद्धापूर्वक भोजन कराओ। इससे निस्सन्देह मेरी मुक्ति हो जायगी। वत्स! अपनी शक्तिके अनुसार पूर्ण श्रद्धाके साथ वेद-विद्यामें प्रवीण अन्य ब्राह्मणोंको भी भोजन कराना।

दिया। पिताने करोड़ोंकी संख्यामें जो धन बाँटकर दिया था, उससे वे सदाचारी पुत्र बहुत प्रसन्न हुए। उनकी बुद्धि धर्ममें लगी हुई थी; इसलिये उन्होंने बावली, कुआँ, पोखरा, यज्ञ तथा देवमन्दिरके लिये उस धनका उपयोग किया और अन्नशाला भी बनवायी। तत्पश्चात् सातवें अध्यायका सदा जप करते हुए उन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। पार्वती! यह तुम्हें सातवें अध्यायका माहात्म्य बताया गया है; जिसके श्रवणमात्रसे मानव सब पातकोंसे मुक्त हो जाता है।

भगवान् शिव कहते हैं—देवि! अब आठवें अध्यायका माहात्म्य सुनो! उसके सुननेसे तुम्हें बड़ी प्रसन्नता होगी। [लक्ष्मीजीके पूछनेपर भगवान् विष्णुने उन्हें इस प्रकार अष्टम अध्यायका माहात्म्य बतलाया था।] दक्षिणमें आमर्दकपुर नामक एक प्रसिद्ध नगर है। वहाँ भावशर्मा नामक एक ब्राह्मण रहता था, जिसने

सर्पयोनिमें पड़े हुए पिताके ये वचन सुनकर सभी पुत्रोंने उसकी आज्ञाके अनुसार तथा उससे भी अधिक किया। तब शङ्कुकर्णने अपने सर्पशरीरको त्यागकर दिव्य देह धारण किया और सारा धन पुत्रोंके अधीन कर

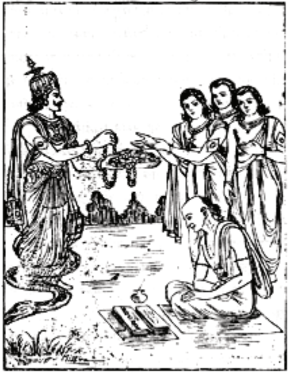

वेश्याको पत्नी बनाकर रखा था। वह मांस खाता, मदिरा पीता, साधुओंका धन चुराता, परायी स्त्रीसे व्यभिचार करता और शिकार खेलनेमें दिलचस्पी रखता था। वह बड़े भयानक स्वभावका था और मनमें बड़े-बड़े हौसले रखता था। एक दिन मदिरा पीनेवालोंका समाज जुटा था। उसमें भावशर्माने भर पेट ताड़ी पी—खूब गलेतक उसे चढ़ाया; अतः अजीर्णसे अत्यन्त पीड़ित होकर वह पापात्मा कालवश मर गया और बहुत बड़ा ताड़का वृक्ष हुआ। उसकी घनी और ठण्डी छायाका आश्रय लेकर ब्रह्म-राक्षसभावको प्राप्त हुए कोई पति-पत्नी वहाँ रहा करते थे।

उनके पूर्वजन्मकी घटना इस प्रकार है। एक कुशीबल नामक ब्राह्मण था, जो वेद-वेदाङ्गके तत्त्वोंका ज्ञाता, सम्पूर्ण शास्त्रोंके अर्थका विशेषज्ञ और सदाचारी था। उसकी स्त्रीका नाम कुमति था। वह बड़े खोटे विचारकी थी। वह ब्राह्मण विद्वान् होनेपर भी अत्यन्त लोभवश अपनी स्त्रीके साथ प्रतिदिन भैंस, कालपुरुष और घोड़े आदि बड़े दानोंको ग्रहण किया करता था; परन्तु दूसरे ब्राह्मणोंको दानमें मिली हुई कौड़ी भी नहीं देता था। वे ही दोनों पति-पत्नी कालवश

मृत्युको प्राप्त होकर ब्रह्मराक्षस हुए। वे भूख और प्याससे पीड़ित हो इस पृथ्वीपर घूमते हुए उसी ताड़-वृक्षके पास आये और उसके मूल भागमें विश्राम करने लगे। इसके बाद पत्नीने पतिसे पूछा—'नाथ! हमलोगोंका यह महान् दुःख कैसे दूर होगा तथा इस ब्रह्मराक्षसयोनिसे किस प्रकार हम दोनोंकी मुक्ति होगी?' तब उस ब्राह्मणने कहा—'ब्रह्मविद्याके उपदेश, अध्यात्म-तत्त्वके विचार और कर्मविधिके ज्ञान बिना किस प्रकार सङ्कटसे छुटकारा मिल सकता है।'

यह सुनकर पत्नीने पूछा—'किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम' (पुरुषोत्तम! वह ब्रह्म क्या है? अध्यात्म क्या है और कर्म कौन-सा है?) उसकी पत्नीके इतना कहते ही जो आश्चर्यकी घटना घटित हुई, उसको सुनो। उपर्युक्त वाक्य गीताके आठवें अध्यायका आधा श्लोक था। उसके श्रवणसे वह वृक्ष उस समय ताड़के रूपको त्यागकर भावशर्मा नामक ब्राह्मण हो गया। तत्काल ज्ञान होनेसे विशुद्धचित्त होकर वह पापके चोलेसे मुक्त हो गया। तथा उस आधे श्लोकके ही माहात्म्यसे वे पति-पत्नी भी मुक्त हो गये। उनके मुखसे दैवात् ही आठवें अध्यायका आधा श्लोक निकल पड़ा था। तदनन्तर आकाशसे एक दिव्य विमान आया और वे दोनों पति-पत्नी उस विमानपर आरूढ़ होकर स्वर्गलोकको चले गये। वहाँका यह सारा वृत्तान्त अत्यन्त आश्चर्यजनक था।

उसके बाद उस बुद्धिमान् ब्राह्मण भावशर्माने आदरपूर्वक उस आधे श्लोकको लिखा और देवदेव भागीरथीके तटपर बुद्धिमान् ब्राह्मण भावशर्मा मेरे भक्तिरससे परिपूर्ण होकर अत्यन्त कठोर तपस्या कर रहा है। वह अपनी इन्द्रियोंको वशमें करके गीताके आठवें अध्यायके आधे श्लोकका जप करता है। मैं उसकी तपस्यासे बहुत सन्तुष्ट हूँ। बहुत देरसे उसकी तपस्याके अनुरूप फलका विचार कर रहा था। प्रिये! इस समय वह फल देनेको मैं उत्कण्ठित हूँ।

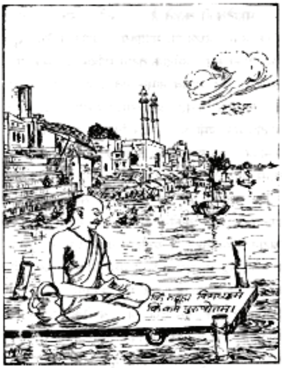

पार्वतीजीने पूछा—भगवन्! श्रीहरि सदा प्रसन्न होनेपर भी जिसके लिये चिन्तित हो उठे थे, उस भगवद्भक्त भावशर्माने कौन-सा फल प्राप्त किया?

जनार्दनकी आराधना करनेकी इच्छासे वह मुक्तिदायिनी काशीपुरीमें चला गया। वहाँ उस उदार बुद्धिवाले ब्राह्मणने भारी तपस्या आरम्भ की। उसी समय क्षीरसागरकी कन्या भगवती लक्ष्मीने हाथ जोड़कर देवताओंके भी देवता जगत्पति जनार्दनसे पूछा— 'नाथ! आप सहसा नींद त्यागकर खड़े क्यों हो गये?'

श्रीभगवान् बोले—देवि! काशीपुरीमें

श्रीमहादेवजी बोले—देवि! द्विजश्रेष्ठ भावशर्मा प्रसन्न हुए भगवान् विष्णुके प्रसादको पाकर आत्यन्तिक सुख (मोक्ष) को प्राप्त हुआ तथा उसके अन्य वंशज भी, जो नरक-यातनामें पड़े थे, उसीके शुभकर्मसे भगवद्धामको प्राप्त हुए। पार्वती! यह आठवें अध्यायका माहात्म्य थोड़ेमें ही तुम्हें बताया है। इसपर सदा विचार करते रहना चाहिये।

★

श्रीमद्भगवद्गीताके नवें और दसवें अध्यायोंका माहात्म्य

महादेवजी कहते हैं—पार्वती! अब मैं आदरपूर्वक नवम अध्यायके माहात्म्यका वर्णन करूँगा, तुम स्थिर होकर सुनो। नर्मदाके तटपर माहिष्मती नामकी एक नगरी है। वहाँ माधव नामके एक ब्राह्मण रहते थे, जो वेद-वेदाङ्गोंके तत्त्वज्ञ और समय-समयपर आनेवाले अतिथियोंके प्रेमी थे। उन्होंने विद्याके द्वारा बहुत धन कमाकर एक महान् यज्ञका अनुष्ठान आरम्भ किया। उस यज्ञमें बलि देनेके लिये एक बकरा मँगाया गया। जब उसके शरीरकी पूजा हो गयी, तब सबको आश्चर्यमें डालते हुए उस बकरेने हँसकर उच्च स्वरसे कहा— 'ब्रह्मन्! इन बहुत-से यज्ञोंद्वारा क्या लाभ है। इनका फल तो नष्ट हो जानेवाला है तथा ये जन्म, जरा और मृत्युके भी कारण हैं। यह सब करनेपर भी मेरी जो वर्तमान दशा है, इसे देख लो।' बकरेके इस अत्यन्त कौतूहलजनक वचनको सुनकर यज्ञमण्डपमें रहनेवाले सभी लोग बहुत ही विस्मित हुए। तब वे यजमान ब्राह्मण हाथ जोड़ अपलक नेत्रोंसे देखते हुए बकरेको प्रणाम करके श्रद्धा और आदरके साथ पूछने लगे।

ब्राह्मण बोले—आप किस जातिके थे? आपका स्वभाव और आचरण कैसा था? तथा किस कर्मसे आपको बकरेकी योनि प्राप्त हुई? यह सब मुझे बताइये।

बकरा बोला—ब्रह्मन्! मैं पूर्वजन्ममें ब्राह्मणोंके अत्यन्त निर्मल कुलमें उत्पन्न हुआ था। समस्त यज्ञोंका अनुष्ठान करनेवाला और वेद-विद्यामें प्रवीण था। एक दिन मेरी स्त्रीने भगवती दुर्गाकी भक्तिसे विनम्र होकर अपने बालकके रोगकी शान्तिके लिये बलि देनेके निमित्त मुझसे एक बकरा माँगा। तत्पश्चात् जब चण्डिकाके मन्दिरमें वह बकरा मारा जाने लगा, उस समय उसकी माताने मुझे शाप दिया—'ओ ब्राह्मणोंमें नीच, पापी! तू मेरे बच्चेका वध करना चाहता है; इसलिये तू भी बकरेकी योनिमें जन्म लेगा।' द्विजश्रेष्ठ! तब कालवश मृत्युको प्राप्त होकर मैं बकरा हुआ। यद्यपि मैं पशु-योनिमें पड़ा हूँ, तो भी मुझे अपने पूर्वजन्मोंका स्मरण बना हुआ है। ब्रह्मन्! यदि आपको सुननेकी उत्कण्ठा हो, तो मैं एक और भी आश्चर्यकी बात बताता हूँ। कुरुक्षेत्र नामका एक नगर है, जो मोक्ष प्रदान करनेवाला है। वहाँ चन्द्रशर्मा नामक एक सूर्यवंशी राजा राज्य करते थे। एक समय जब कि सूर्यग्रहण लगा था, राजाने बड़ी श्रद्धाके साथ कालपुरुषका दान करनेकी तैयारी की। उन्होंने वेद-वेदाङ्गोंके पारगामी एक विद्वान् ब्राह्मणको बुलवाया और पुरोहितके साथ वे तीर्थके पावन जलसे स्नान करनेको चले। तीर्थके पास पहुँचकर राजाने स्नान किया और दो वस्त्र धारण किये। फिर पवित्र एवं प्रसन्नचित्त होकर उन्होंने श्वेत चन्दन लगाया और बगलमें खड़े हुए पुरोहितका हाथ पकड़कर तत्कालोचित मनुष्योंसे घिरे हुए अपने स्थानपर लौट आये। आनेपर राजाने यथोचित विधिसे भक्तिपूर्वक ब्राह्मणको कालपुरुषका दान किया।

तब कालपुरुषका हृदय चीरकर उसमेंसे एक पापात्मा चाण्डाल प्रकट हुआ। फिर थोड़ी देरके बाद निन्दा भी चाण्डालीका रूप धारण करके कालपुरुषके शरीरसे निकली और ब्राह्मणके पास आ गयी। इस प्रकार चाण्डालोंकी वह जोड़ी आँखें लाल किये निकली और ब्राह्मणके शरीरमें हठात् प्रवेश करने लगी। ब्राह्मण मन-ही-मन गीताके नवम अध्यायका जप करते थे और राजा चुपचाप यह सब कौतुक देखने लगे। ब्राह्मणके अन्तःकरणमें भगवान् गोविन्द शयन करते थे। वे उन्हींका ध्यान करने लगे। ब्राह्मणने [जब गीताके नवम अध्यायका जप करते हुए] अपने आश्रयभूत भगवान्का ध्यान किया, उस समय गीताके अक्षरोंसे प्रकट हुए विष्णुदूतोंद्वारा पीड़ित होकर वे दोनों चाण्डाल भाग चले। उनका उद्योग निष्फल हो गया। इस प्रकार इस घटनाको प्रत्यक्ष देखकर राजाके नेत्र आश्चर्यसे चकित हो उठे। उन्होंने ब्राह्मणसे पूछा—'विप्रवर! इस महाभयङ्कर आपत्तिको आपने कैसे पार किया? आप किस मन्त्रका

जप तथा किस देवताका स्मरण कर रहे थे ? वह पुरुष तथा वह स्त्री कौन थी ? वे दोनों कैसे उपस्थित हुए ? फिर वे शान्त कैसे हो गये ? यह सब मुझे बतलाइये।'

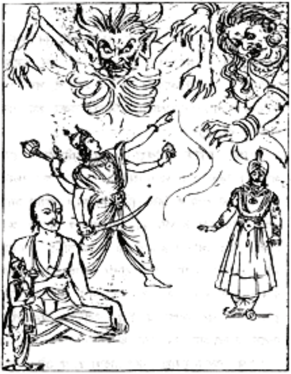

ब्राह्मणने कहा—राजन्! चाण्डालका रूप धारण करके भयङ्कर पाप ही प्रकट हुआ था तथा वह स्त्री निन्दाकी साक्षात् मूर्ति थी। मैं इन दोनोंको ऐसा ही समझता हूँ। उस समय मैं गीताके नवें अध्यायके मन्त्रोंकी माला जपता था। उसीका माहात्म्य है कि सारा सङ्कट दूर हो गया। महीपते! मैं नित्य ही गीताके नवम अध्यायका जप करता हूँ। उसीके प्रभावसे प्रतिग्रहजनित आपत्तियोंके पार हो सका हूँ।

यह सुनकर राजाने उसी ब्राह्मणसे गीताके नवम अध्यायका अभ्यास किया, फिर वे दोनों ही परमशान्ति (मोक्ष) को प्राप्त हो गये।

[यह कथा सुनकर ब्राह्मणने बकरेको बन्धनसे मुक्त कर दिया और गीताके अभ्याससे परमगतिको प्राप्त किया।]

भगवान् शिव कहते हैं—सुन्दरि! अब तुम दशम अध्यायके माहात्म्यकी परम पावन कथा सुनो, जो स्वर्गरूपी दुर्गमें जानेके लिये सुन्दर सोपान और प्रभावकी चरम सीमा है। काशीपुरीमें धीरबुद्धि नामसे विख्यात एक ब्राह्मण था, जो मुझमें नन्दीके समान भक्ति रखता था। वह पावन कीर्तिके अर्जनमें तत्पर रहनेवाला, शान्तचित्त और हिंसा, कठोरता एवं दुःसाहससे दूर रहनेवाला था। जितेन्द्रिय होनेके कारण वह निवृत्तिमार्गमें ही स्थित रहता था। उसने वेदरूपी समुद्रका पार पा लिया था। वह सम्पूर्ण शास्त्रोंके तात्पर्यका ज्ञाता था। उसका चित्त सदा मेरे ध्यानमें संलग्न रहता था। वह मनको अन्तरात्मामें लगाकर सदा आत्मतत्त्वका साक्षात्कार किया करता था; अतः जब वह चलने लगता तो मैं प्रेमवश उसके पीछे दौड़-दौड़कर उसे हाथका सहारा देता रहता था।

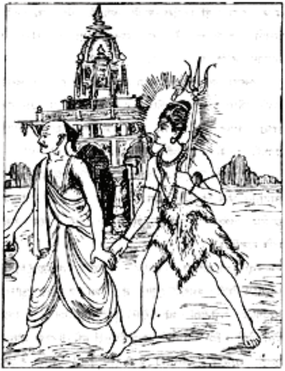

यह देख मेरे पार्षद भृङ्गिरिटिने पूछा—भगवन्! इस प्रकार भला, किसने आपका दर्शन किया होगा। इस महात्माने कौन-सा तप, होम अथवा जप किया है कि स्वयं आप ही पद-पदपर इसे हाथका सहारा देते चलते हैं?

भृङ्गिरिटिका यह प्रश्न सुनकर मैंने इस प्रकार उत्तर

देना आरम्भ किया। एक समयकी बात है, कैलास-पर्वतके पार्श्वभावमें पुन्नाग वनके भीतर चन्द्रमाकी अमृतमयी किरणोंसे धुली हुई भूमिमें एक वेदीका आश्रय लेकर मैं बैठा हुआ था। मेरे बैठनेके क्षणभर बाद ही सहसा बड़े जोरकी आँधी उठी, वहाँके वृक्षोंकी शाखाएँ नीचे-ऊपर होकर आपसमें टकराने लगीं, कितनी ही टहनियाँ टूट-टूटकर बिखर गयीं। पर्वतकी अविचल छाया भी हिलने लगी। इसके बाद वहाँ महान् भयङ्कर शब्द हुआ। जिससे पर्वतकी कन्दराएँ प्रतिध्वनित हो उठीं। तदनन्तर आकाशसे कोई विशाल पक्षी उतरा, जिसकी कान्ति काले मेघके समान थी। वह कज्जलकी राशि, अन्धकारके समूह अथवा पंख कटे हुए काले पर्वत-सा जान पड़ता था। पैरोंसे पृथ्वीका सहारा लेकर उस पक्षीने मुझे प्रणाम किया और एक सुन्दर नवीन कमल मेरे चरणोंमें रखकर स्पष्ट वाणीमें स्तुति करनी आरम्भ की।

पक्षी बोला—देव! आपकी जय हो। आप चिदानन्दमयी सुधाके सागर तथा जगत्के पालक हैं। सदा सद्भावनासे युक्त एवं अनासक्तिकी लहरोंसे उल्लसित हैं। आपके वैभवका कहीं अन्त नहीं है। आपकी जय हो। अद्वैतवासनासे परिपूर्ण बुद्धिके द्वारा आप त्रिविध मलोंसे रहित हैं। आप जितेन्द्रिय भक्तोंके अधीन रहते हैं तथा ध्यानमें आपके स्वरूपका साक्षात्कार होता है। आप अविद्यामय उपाधिसे रहित, नित्यमुक्त, निराकार, निरामय, असीम, अहङ्कारशून्य, आवरणरहित और निर्गुण हैं। आपके चरणकमल शरणागत भक्तोंकी रक्षा करनेमें प्रवीण हैं। अपने भयङ्कर ललाटरूपी महासर्पकी विष-ज्वालासे आपने कामदेवको भस्म किया है। आपकी जय हो। आप प्रत्यक्ष आदि प्रमाणोंसे दूर होते हुए भी प्रामाण्यस्वरूप हैं। आपको बारम्बार नमस्कार है। चैतन्यके स्वामी तथा त्रिभुवनरूप-धारी आपको प्रणाम है। मैं श्रेष्ठ योगियोंद्वारा चुम्बित आपके उन चरण-कमलोंकी वन्दना करता हूँ, जो अपार भव-पापके समुद्रसे पार उतारनेमें अद्भुत शक्तिशाली हैं। महादेव! साक्षात् बृहस्पति भी आपकी स्तुति करनेकी धृष्टता नहीं कर सकते। सहस्र मुखोंवाले नागराज शेषमें भी इतनी चातुरी नहीं है कि वे आपके गुणोंका वर्णन कर सकें। फिर मेरे-जैसे छोटी बुद्धिवाले पक्षीकी तो बिसात ही क्या है।

उस पक्षीके द्वारा किये हुए इस स्तोत्रको सुनकर मैंने उससे पूछा—'विहङ्गम! तुम कौन हो और कहाँसे आये हो? तुम्हारी आकृति तो हंस-जैसी है, मगर रंग कौएका मिला है। तुम जिस प्रयोजनको लेकर यहाँ आये हो, उसे बताओ।'

पक्षी बोला—देवेश! मुझे ब्रह्माजीका हस जानिये। धूर्जटे! जिस कर्मसे मेरे शरीरमें इस समय कालिमा आ गयी है, उसे सुनिये। प्रभो! यद्यपि आप सर्वज्ञ हैं [अतः आपसे कोई भी बात छिपी नहीं है] तथापि यदि आप पूछते हैं तो बतलाता हूँ। सौराष्ट्र (सूरत) नगरके पास एक सुन्दर सरोवर है, जिसमें कमल लहलहाते रहते थे। उसीमेंसे बालचन्द्रमाके टुकड़े-जैसे श्वेत मृणालोंके ग्रास लेकर मैं बड़ी तीव्र गतिसे आकाशमें उड़ रहा था। उड़ते-उड़ते सहसा वहाँसे पृथ्वीपर गिर पड़ा। जब होशमें आया और अपने गिरनेका कोई कारण न देख सका तो मन-ही-मन सोचने लगा—'अहो! यह मुझपर क्या आ पड़ा? आज मेरा पतन कैसे हो गया? पके हुए कपूरके समान मेरे श्वेत शरीरमें यह कालिमा कैसे आ गयी?' इस प्रकार विस्मित होकर मैं अभी विचार ही कर रहा था कि उस पोखरेके कमलोंमेंसे मुझे ऐसी वाणी सुनायी दी—'हंस! उठो, मैं तुम्हारे गिरने और काले होनेका कारण बताती हूँ।' तब मैं उठकर सरोवरके बीचमें गया और वहाँ पाँच कमलोंसे युक्त एक सुन्दर कमलिनीको देखा। उसको प्रणाम करके मैंने प्रदक्षिणा की और अपने पतनका सारा कारण पूछा।

कमलिनी बोली—कलहंस! तुम आकाश-मार्गसे मुझे लाँघकर गये हो, उसी पातकके परिणामवश तुम्हें पृथ्वीपर गिरना पड़ा है तथा उसीके कारण तुम्हारे शरीरमें कालिमा दिखायी देती है। तुम्हें गिरा देख मेरे हृदयमें दया भर आयी और जब मैं इस मध्यम कमलके

द्वारा बोलने लगी हूँ, उस समय मेरे मुखसे निकली हुई सुगन्धको सूँघकर साठ हजार भँवरे स्वर्गलोकको प्राप्त हो गये हैं। पक्षिराज! जिस कारण मुझमें इतना वैभव—ऐसा प्रभाव आया है, उसे बतलाती हूँ; सुनो! इस

मेरा नाम पद्मावती हुआ और मैं पद्माकी प्यारी सखी हो गयी। एक दिन मैं विमानसे आकाशमें विचर रही थी। उस समय सुन्दर कमलोंसे सुशोभित इस रमणीय सरोवरपर मेरी दृष्टि पड़ी और इसमें उतरकर ज्यों ही मैंने

जन्मसे पहले तीसरे जन्ममें मैं इस पृथ्वीपर एक ब्राह्मणकी कन्याके रूपमें उत्पन्न हुई थी। उस समय मेरा नाम सरोजवदना था। मैं गुरुजनोंकी सेवा करती हुई सदा एकमात्र पातिव्रत्यके पालनमें तत्पर रहती थी। एक दिनकी बात है, मैं एक मैनाको पढ़ा रही थी। इससे पतिसेवामें कुछ विलम्ब हो गया। इससे पतिदेवता कुपित हो गये और उन्होंने शाप दिया—'पापिनी ! तू मैना हो जा।' मरनेके बाद यद्यपि मैं मैना ही हुई, तथापि पातिव्रत्यके प्रसादसे मुनियोंके ही घरमें मुझे आश्रय मिला। किसी मुनिकन्याने मेरा पालन-पोषण किया। मैं जिनके घरमें थी, वे ब्राह्मण प्रतिदिन प्रातःकाल विभूतियोग नामसे प्रसिद्ध गीताके दसवें अध्यायका पाठ करते थे और मैं उस पापहारी अध्यायको सुना करती थी। विहङ्गम ! काल आनेपर मैं मैनाका शरीर छोड़कर दशम अध्यायके माहात्म्यसे स्वर्गलोकमें अप्सरा हुई।

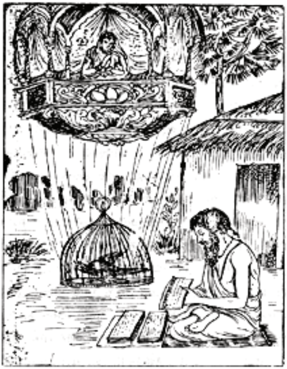

जलक्रीड़ा आरम्भ की, त्यों ही दुर्वासा मुनि आ धमके। उन्होंने वस्त्रहीन अवस्थामें मुझे देख लिया। उनके भयसे मैंने स्वयं ही यह कमलिनीका रूप धारण कर लिया। मेरे दोनों पैर दो कमल हुए। दोनों हाथ भी दो कमल हो गये और शेष अङ्गोंके साथ मेरा मुख भी एक कमल हुआ। इस प्रकार मैं पाँच कमलोंसे युक्त हुई। मुनिवर दुर्वासाने मुझे देखा। उनके नेत्र क्रोधाग्निसे जल रहे थे। वे बोले—'पापिनी ! तू इसी रूपमें सौ वर्षोंतक पड़ी रह।' यह शाप देकर वे क्षणभरमें अन्तर्धान हो गये। कमलिनी होनेपर भी विभूति-योगाध्यायके माहात्म्यसे मेरी वाणी लुप्त नहीं हुई है। मुझे लाँघनेमात्रके अपराधसे तुम पृथ्वीपर गिरे हो। पक्षिराज ! यहाँ खड़े हुए तुम्हारे सामने ही आज मेरे शापकी निवृत्ति हो रही है, क्योंकि आज सौ वर्ष पूरे हो गये। मेरे द्वारा गाये जाते हुए उस उत्तम अध्यायको तुम भी सुन लो। उसके श्रवणमात्रसे तुम भी आज ही मुक्त हो जाओगे।

यों कहकर पद्मिनीने स्पष्ट एवं सुन्दर वाणीमें दसवें अध्यायका पाठ किया और वह मुक्त हो गयी। उसे सुननेके बाद उसीके दिये हुए इस उत्तम कमलको लाकर मैंने आपको अर्पण किया है।

इतनी कथा सुनाकर उस पक्षीने अपना शरीर त्याग दिया। यह एक अद्भुत-सी घटना हुई। वही पक्षी अब दसवें अध्यायके प्रभावसे ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न हुआ है। जन्मसे ही अभ्यास होनेके कारण शैशवावस्थासे ही इसके मुखसे सदा गीताके दसवें अध्यायका उच्चारण हुआ करता है। दसवें अध्यायके अर्थ-चिन्तनका यह परिणाम हुआ है कि यह सब भूतोंमें स्थित शङ्ख-चक्रधारी भगवान् विष्णुका सदा ही दर्शन करता रहता है। इसकी स्नेहपूर्ण दृष्टि जब कभी किसी देहधारीके शरीरपर पड़ जाती है, तो वह चाहे शराबी और ब्रह्महत्यारा ही क्यों न हो, मुक्त हो जाता है। तथा पूर्वजन्ममें अभ्यास किये हुए दसवें अध्यायके माहात्म्यसे इसको दुर्लभ तत्त्वज्ञान प्राप्त है तथा इसने जीवन्मुक्ति भी पा ली है। अतः जब यह रास्ता चलने लगता है तो मैं इसे हाथका सहारा दिये रहता हूँ। भृङ्गिरिटि ! यह सब दसवें अध्यायकी ही महामहिमा है।

पार्वती ! इस प्रकार मैंने भृङ्गिरिटिके सामने जो पापनाशक कथा कही थी, वही यहाँ तुमसे भी कही है। नर हो या नारी, अथवा कोई भी क्यों न हो, इस दसवें अध्यायके श्रवणमात्रसे उसे सब आश्रमोंके पालनका फल प्राप्त होता है।

★

श्रीमद्भगवद्गीताके ग्यारहवें अध्यायका माहात्म्य

श्रीमहादेवजी कहते हैं—प्रिये ! गीताके वर्णनसे सम्बन्ध रखनेवाली कथा एवं विश्वरूप अध्यायके पावन माहात्म्यको श्रवण करो। विशाल नेत्रोंवाली पार्वती ! इस अध्यायके माहात्म्यका पूरा-पूरा वर्णन नहीं किया जा सकता। इसके सम्बन्धमें सहस्रों कथाएँ हैं। उनमेंसे एक यहाँ कही जाती है। प्रणीता नदीके तटपर मेघङ्कर नामसे विख्यात एक बहुत बड़ा नगर है। उसके प्राकार और गोपुर बहुत ऊँचे हैं। वहाँ बड़ी-बड़ी विश्रामशालाएँ हैं, जिनमें सोनेके खंभे शोभा दे रहे हैं। उस नगरमें श्रीमान्, सुखी, शान्त, सदाचारी तथा जितेन्द्रिय मनुष्योंका निवास है। वहाँ हाथमें शार्ङ्ग-नामक धनुष धारण करनेवाले जगदीश्वर भगवान् विष्णु विराजमान हैं। वे परब्रह्मके साकार स्वरूप हैं। संसारके नेत्रोंको जीवन प्रदान करनेवाले हैं। उनका गौरवपूर्ण श्रीविग्रह भगवती लक्ष्मीके नेत्र-कमलोंद्वारा पूजित होता है। भगवान्की वह झाँकी वामन-अवतारकी है। मेघके समान उनका श्यामवर्ण तथा कोमल आकृति है। वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिह्न शोभा पाता है। वे कमल और वनमालासे विभूषित हैं। अनेक प्रकारके आभूषणोंसे सुशोभित हो भगवान् वामन रत्नयुक्त समुद्रके सदृश जान पड़ते हैं। पीताम्बरसे उनके श्याम विग्रहकी कान्ति ऐसी प्रतीत होती है, मानो चमकती हुई बिजलीसे घिरा हुआ स्निग्ध मेघ शोभा पा रहा हो। उन भगवान् वामनका दर्शन करके जीव जन्म एवं संसारके बन्धनसे मुक्त हो जाता है। उस नगरमें मेखला नामक महान् तीर्थ है, जिसमें स्नान करके मनुष्य शाश्वत वैकुण्ठधामको प्राप्त होता है। वहाँ जगत्के स्वामी करुणासागर भगवान् नृसिंहका दर्शन करनेसे मनुष्य सात जन्मोंके किये हुए घोर पापसे छुटकारा पा जाता है। जो मनुष्य मेखलामें गणेशजीका दर्शन करता है, वह सदा दुस्तर विघ्नोंके भी पार हो जाता है।

उसी मेघङ्कर नगरमें कोई श्रेष्ठ ब्राह्मण थे, जो ब्रह्मचर्यपरायण, ममता और अहङ्कारसे रहित, वेद-शास्त्रोंमें प्रवीण, जितेन्द्रिय तथा भगवान् वासुदेवके शरणागत थे। उनका नाम सुनन्द था। प्रिये ! वे शार्ङ्गधनुष धारण करनेवाले भगवान्के पास गीताके ग्यारहवें अध्याय—विश्वरूपदर्शनयोगका पाठ किया करते थे। उस अध्यायके प्रभावसे उन्हें ब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति हो गयी थी। परमानन्द-सन्दोहसे पूर्ण उत्तम ज्ञानमयी समाधिके द्वारा इन्द्रियोंके अन्तर्मुख हो जानेके कारण वे निश्चल स्थितिको प्राप्त हो गये थे और सदा जीवन्मुक्त योगीकी स्थितिमें रहते थे। एक समय जब बृहस्पति सिंह राशिपर स्थित थे, महायोगी सुनन्दने गोदावरीतीर्थकी यात्रा आरम्भ की। वे क्रमशः विरजतीर्थ, तारा तीर्थ, कपिलासंगम, अष्टतीर्थ, कपिलाद्वार, नृसिंहवन, अम्बिकापुरी तथा करस्थानपुर आदि क्षेत्रोंमें स्नान और दर्शन करते हुए विवाहमण्डप नामक नगरमें आये। वहाँ उन्होंने प्रत्येक घरमें जाकर अपने ठहरनेके लिये स्थान माँगा, परन्तु कहीं भी उन्हें स्थान नहीं मिला। अन्तमें गाँवके मुखियाने उन्हें एक बहुत बड़ी धर्मशाला दिखा दी। ब्राह्मणने साथियोंसहित उसके भीतर जाकर रातमें निवास किया। सबेरा होनेपर उन्होंने अपनेको तो धर्मशालाके बाहर पाया, किन्तु उनके और साथी नहीं दिखायी दिये। वे उन्हें खोजनेके लिये चले, इतनेमें ही

ग्रामपाल (मुखिये) से उनकी भेंट हो गयी। ग्रामपालने कहा—'मुनिश्रेष्ठ ! तुम सब प्रकारसे दीर्घायु जान पड़ते हो। सौभाग्यशाली तथा पुण्यवान् पुरुषोंमें तुम सबसे पवित्र हो। तुम्हारे भीतर कोई लोकोत्तर प्रभाव विद्यमान है। तुम्हारे साथी कहाँ गये ? और कैसे इस भवनसे बाहर हुए ? इसका पता लगाओ। मैं तुम्हारे सामने इतना ही कहता हूँ कि तुम्हारे-जैसा तपस्वी मुझे दूसरा कोई नहीं दिखायी देता। विप्रवर ! तुम्हें किस महामन्त्रका ज्ञान है ? किस विद्याका आश्रय लेते हो तथा किस देवताकी दयासे तुममें अलौकिक शक्ति आ गयी है ? भगवन् ! कृपा करके इस गाँवमें रहो ! मैं तुम्हारी सब सेवा-शुश्रूषा करूँगा।'

यों कहकर ग्रामपालने मुनीश्वर सुनन्दको अपने गाँवमें ठहरा लिया। वह दिन-रात बड़ी भक्तिसे उनकी सेवा-टहल करने लगा। जब सात-आठ दिन बीत गये, तब एक दिन प्रातःकाल आकर वह बहुत दुःखी हो महात्माके सामने रोने लगा और बोला—'हाय ! आज क्या प्रभाव है, इस बातको तुम्हीं जानते हो। इस समय मेरे पुत्रका एक मित्र आया था, किन्तु मैं उसे पहचान न सका। वह मेरे पुत्रको बहुत ही प्रिय था; किन्तु अन्य राहगीरोंके साथ उसे भी मैंने उसी धर्मशालामें भेज दिया। मेरे पुत्रने जब सुना कि मेरा मित्र भी उसमें प्रवेश कर गया है, तब वह उसे वहाँसे ले आनेके लिये गया। परन्तु राक्षसने उसे भी खा लिया। आज सबेरे मैंने बहुत दुःखी होकर उस पिशाचसे पूछा—'ओ दुष्टात्मन् ! तूने रातमें मेरे पुत्रको भी खा लिया। तुम्हारे पेटमें पड़ा हुआ मेरा पुत्र जिससे जीवित हो सके, ऐसा कोई उपाय यदि हो तो बता।'

राक्षसने कहा—ग्रामपाल ! धर्मशालाके भीतर घुसे हुए तुम्हारे पुत्रको न जाननेके कारण मैंने भक्षण किया है। अन्य पथिकोंके साथ तुम्हारा पुत्र भी अनजानमें ही मेरा ग्रास बन गया है। वह मेरे उदरमें जिस प्रकार जीवित और रक्षित रह सकता है, वह उपाय स्वयं विधाताने ही कर दिया है। जो ब्राह्मण सदा गीताके ग्यारहवें अध्यायका

रातमें राक्षसने मुझ भाग्यहीनके बेटेको चबा लिया है। मेरा पुत्र बड़ा ही गुणवान् और भक्तिमान् था।' ग्रामपालके इस प्रकार कहनेपर योगी सुनन्दने पूछा—'कहाँ है वह राक्षस ? और किस प्रकार उसने तुम्हारे पुत्रका भक्षण किया है ?'

ग्रामपाल बोला—ब्रह्मन् ! इस नगरमें एक बड़ा भयङ्कर नरभक्षी राक्षस रहता है। वह प्रतिदिन आकर इस नगरके मनुष्योंको खा लिया करता था। तब एक दिन समस्त नगरवासियोंने मिलकर उससे प्रार्थना की—'राक्षस ! तुम हम सब लोगोंकी रक्षा करो। हम तुम्हारे लिये भोजनकी व्यवस्था किये देते हैं। यहाँ बाहरके जो पथिक रातमें आकर नींद लेने लगें, उनको खा जाना।' इस प्रकार नागरिक मनुष्योंने गाँवके (मुझ) मुखिया-द्वारा इस धर्मशालामें भेजे हुए पथिकोंको ही राक्षसका आहार निश्चित किया। अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये ही उन्हें ऐसा करना पड़ा। तुम भी अन्य राहगीरोंके साथ इस घरमें आकर सोये थे; किन्तु राक्षसने उन सबोंको तो खा लिया, केवल तुम्हें छोड़ दिया है। द्विजोत्तम ! तुममें ऐसा

पाठ करता हो, उसके प्रभावसे मेरी मुक्ति होगी और मरे हुओंको पुनः जीवन प्राप्त होगा। यहाँ कोई ब्राह्मण रहते हैं, जिनको मैंने एक दिन धर्मशालेसे बाहर कर दिया था। वे निरन्तर गीताके ग्यारहवें अध्यायका जप किया करते हैं। इस अध्यायके मन्त्रसे सात बार अभिमन्त्रित करके यदि वे मेरे ऊपर जलका छींटा दें तो निस्सन्देह मेरा शापसे उद्धार हो जायगा।

इस प्रकार उस राक्षसका सन्देश पाकर मैं तुम्हारे निकट आया हूँ।

ब्राह्मणने पूछा—ग्रामपाल ! जो रातमें सोये हुए मनुष्योंको खाता है, वह प्राणी किस पापसे राक्षस हुआ है ?

ग्रामपाल बोला—ब्रह्मन् ! पहले इस गाँवमें कोई किसान ब्राह्मण रहता था। एक दिन वह अगहनीके खेतकी क्यारियोंकी रक्षा करनेमें लगा था। वहाँसे थोड़ी ही दूरपर एक बहुत बड़ा गिद्ध किसी राहीको मारकर खा रहा था। उसी समय एक तपस्वी कहींसे आ निकले, जो उस राहीको बचानेके लिये दूरसे ही दया दिखाते आ रहे

थे। गिद्ध उस राहीको खाकर आकाशमें उड़ गया। तब तपस्वीने कुपित होकर उस किसानसे कहा—'ओ दुष्ट हलवाहे ! तुझे धिक्कार है। तू बड़ा ही कठोर और निर्दयी है। दूसरेकी रक्षासे मुँह मोड़कर केवल पेट पालनेके धंधेमें लगा है। तेरा जीवन नष्टप्राय है। अरे ! जो चोर, दाढ़वाले जीव, सर्प, शत्रु, अग्नि, विष, जल, गीध, राक्षस, भूत तथा बेताल आदिके द्वारा घायल हुए मनुष्योंकी शक्ति होते हुए भी उपेक्षा करता है, वह उनके वधका फल पाता है। जो शक्तिशाली होकर भी चोर आदिके चंगुलमें फँसे हुए ब्राह्मणको छुड़ानेकी चेष्टा नहीं करता, वह घोर नरकमें पड़ता और पुनः भेड़ियेकी योनिमें जन्म लेता है। जो वनमें मारे जाते हुए तथा गृध्र और व्याघ्रकी दृष्टिमें पड़े हुए जीवकी रक्षाके लिये 'छोड़ो, छोड़ो' की पुकार करता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। जो मनुष्य गौओंकी रक्षाके लिये व्याघ्र, भील तथा दुष्ट राजाओंके हाथसे मारे जाते हैं, वे भगवान् विष्णुके उस परमपदको पाते हैं जो योगियोंके लिये भी दुर्लभ है। सहस्र अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञ मिलकर शरणागत-रक्षाकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हो सकते। दीन तथा भयभीत जीवकी उपेक्षा करनेसे पुण्यवान् पुरुष भी समय आनेपर कुम्भीपाक नामक नरकमें पकाया जाता है।* तूने दुष्ट गिद्धके द्वारा खाये जाते हुए राहीको देखकर उसे बचानेमें समर्थ होते हुए भी जो उसकी रक्षा नहीं की, इससे तू निर्दयी जान पड़ता है; अतः तू राक्षस हो जा ?'

हलवाहा बोला—महात्मन् ! मैं यहाँ उपस्थित अवश्य था, किन्तु मेरे नेत्र बहुत देरसे खेतकी रक्षामें लगे थे, अतः पास होनेपर भी गिद्धके द्वारा मारे जाते हुए इस मनुष्यको मैं नहीं जान सका। अतः मुझ दीनपर

ग्यारहवें अध्यायका जप करता है, उस मनुष्यके द्वारा अभिमन्त्रित जल जब तुम्हारे मस्तकपर पड़ेगा, उस समय तुम्हें शापसे छुटकारा मिल जायगा।

यह कहकर तपस्वी ब्राह्मण चले गये और वह हलवाहा राक्षस हो गया; अतः द्विजश्रेष्ठ ! तुम चलो और ग्यारहवें अध्यायसे तीर्थके जलको अभिमन्त्रित करो। फिर अपने ही हाथसे उस राक्षसके मस्तकपर उसे छिड़क दो।

ग्रामपालकी यह सारी प्रार्थना सुनकर ब्राह्मणका हृदय करुणासे भर आया। वे 'बहुत अच्छा' कहकर उसके साथ राक्षसके निकट गये। वे ब्राह्मण योगी थे। उन्होंने विश्वरूपदर्शन नामक ग्यारहवें अध्यायसे जल अभिमन्त्रित करके उस राक्षसके मस्तकपर डाला। गीताके अध्यायके प्रभावसे वह शापसे मुक्त हो गया। उसने राक्षस-देहका परित्याग करके चतुर्भुज रूप धारण कर लिया तथा उसने

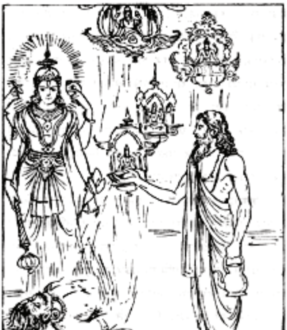

आपको अनुग्रह करना चाहिये।

तपस्वी ब्राह्मणने कहा—जो प्रतिदिन गीताके

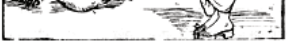

---

* अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च ॥
शरणागतसंत्राणकलां नार्हन्ति षोडशीम् ।
दीनस्योपेक्षणं कृत्वा भीतस्य च शरीरिणः ॥
पुण्यवानपि कालेन कुम्भीपाके स पच्यते । (१८१।८२—८४)